॥ श्रीललितोपनिषत् ॥

॥ श्रीललितात्रिपुरसुन्दर्यै नमः ॥

ॐ परमकारणभूता शक्तिः केन नवचक्ररूपो देहः ।
नवचक्रशक्तिमयं श्रीचक्रम् । पुरुषार्थाः सागराः । देहो नवरत्ने
द्वीपः । आधारनवकमुद्राः शक्तयः । त्वगादिसप्तधातुभिरनेकैः
संयुक्ताः सङ्कल्पाः कल्पतरवः । तेजः कल्पकोद्यानम् ॥

रसनया भासमाना मधुराम्लतिक्तकटुकषायलवणरसाः षड्रसाः ।
क्रियाशक्तिः पीठं कुण्डलिनी ज्ञानशक्तिरहमिच्छाशक्तिः ।
महात्रिपुरसुन्दरी ज्ञाता होता । ज्ञानमर्घ्यं ज्ञेयं हविः
ज्ञातृज्ञानज्ञेयानां नमोभेदभावनं श्रीचक्रपूजनम् ॥

नियतिसहितशृङ्गारादयो नवरसाः । अणिमादयः
कामक्रोधलोभमोहमदमात्सर्यपुण्यपापमया
ब्राह्म्यादयोऽष्टशक्तयः । आधारनवकमुद्रा शक्तयः ।
पृथ्व्यप्तेजोवाय्वाकाशश्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वा-
प्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थमनोविकाराः षोडशशक्तयः ।
वचनादानगमनविसर्गानन्दादानोपादानोपेक्षा-
बुद्धयोऽनङ्गकुसुमादिशक्तयोऽष्टौ ।
अलम्बुषाकुहूविश्वोदरीवरुणाहस्तिजिह्वायशस्विनी-
गान्धारीपूषासरस्वतीडापिङ्गलासुषुम्ना
चेति चतुर्दशनाडयः सर्वसङ्क्षोभिण्यादिचतुर्दशारदेवताः ॥

प्राणापानव्यानोदानसमाननागकूर्मकृकलदेवदत्तधनञ्जया
दशवायवः सर्वसिद्धिप्रदादि बहिर्दशारदेवताः ।
एतद्वायुदशकसंसर्गोपाधिभेदेन
रेचकपूरकपोषकदाहकाल्पावकामृतमिति प्राणः
सङ्ख्यत्वेन पञ्चविधोऽस्ति । जठराग्निर्मनुष्याणां मोहको
भक्ष्यभोज्यलेह्यचोष्यात्मकं चतुर्विधमन्नं पाचयति । तदा
काशवान्सकलाः सर्वज्ञत्वाद्यन्तर्दशारदेवताः ॥

शीतोष्णसुखदुःखेच्छासत्वरजस्तमोगुणादय वशिन्यादिशक्तयोऽष्टौ ।
शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः पञ्चतन्मात्राः पञ्चपुष्पबाणा
मन इक्षुधनुर्वल्यो बाणो रागः पाशो द्वेषोऽङ्कुशः ।
अव्यक्तमहत्तत्त्वाहङ्कारकामेश्वरीवज्रेश्वरी-
भगमालिन्योऽन्तस्त्रिकोणाग्रदेवताः ॥

पञ्चदशतिथिरूपेण कालस्य परिणामावलोकनपञ्चदशनित्याः शुद्धानुरुपाधिदेवताः । निरुपाधिसार्वदेवकामेश्वरी सदाऽऽनन्दपूर्णा । स्वात्म्यैक्यरूपललिताकामेश्वरी सदाऽऽनन्दघनपूर्णा स्वात्मैक्यरूपा देवता ललितामिति ॥

साहित्यकरणं सत्त्वं । कर्त्तव्यमकर्त्तव्यमिति भावनामुक्ता उपचाराः । अहं त्वमस्ति नास्ति कर्त्तव्याकर्त्तव्यमुपासितव्यानुपासितव्यमिति विकल्पना । मनोविलापनं होमः ॥

बाह्याभ्यन्तरकरणानां रूपग्रहणयोग्यतास्तीत्यावाहनम् ।
तस्य बाह्याभ्यन्तरकरणानामेकरूपविषयग्रहणमासनम् ।
रक्तशुक्लपदैकीकरणं पाद्यम् ।
उज्ज्वलदामोदाऽऽनन्दात्सानन्दनमर्घ्यम् । स्वच्छास्वतः शक्तिरित्याचमनम् । चिच्चन्द्रमयीस्मरणं स्नानम् । चिदग्निस्वरूपपरमानन्दशक्तिस्मरणं वस्त्रम् । प्रत्येकं सप्तविंशतिधाभिन्नत्वेन इच्छाक्रियात्मकब्रह्मग्रन्थिमयी सतन्तुब्रह्मनाडी ब्रह्मसूत्रं सव्यातिरिक्तवस्त्रम् । सङ्गरहितं स्मरणं विभूषणम् । स्वच्छन्दपरिपूर्णस्मरणं गन्धः । समस्तविषयाणां मनःस्थैर्येणानुसन्धानं कुसुमम् । तेषामेव सर्वदा स्वीकरणं धूपः । पवनाच्छिन्नोर्ध्वज्वालासच्चिदाह्लादाकाशदेहो दीपः । समस्तयातायातवर्जनं नैवेद्यम् । अवस्थात्रयैकीकरणं ताम्बूलम् । मूलाधारादाब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तं ब्रह्मरन्ध्रादामूलाधारपर्यन्तं गतागतरूपेण प्रादक्षिण्यम् । तुरीयावस्थानं संस्कारदेहशून्यं प्रमादितावतिमज्जनं बलिहरणम् । सत्त्वमस्ति कर्त्तव्यमकर्त्तव्यमौदासीन्यमात्मविलापनं होमः । भावनाविषयाणामभेदभावना तर्पणम् । स्वयं तत्पादुकानिमज्जनं परिपूर्णध्यानम् ॥

एवं मूर्तित्रयं भावनया युक्तो मुक्तो भवति । तस्य देवतात्मैक्यसिद्धिश्चितिकार्याण्यप्रयत्नेन सिध्यन्ति स एव शिवयोगीति कथ्यते ॥

॥ इति श्रीललितोपनिषत्सम्पूर्णा ॥

हिंदी में अर्थ

॥ श्रीललितात्रिपुरसुन्दरी को नमस्कार ॥

परम-कारण-भूता शक्ति द्वारा मानव शरीर नौ चक्र-रूपात्मक बना है । ``श्री-चक्र'' इन्हीं नौ चक्रों की शक्ति से परिपूर्ण है । पुरुषार्थ ही सागर-स्वरूप है और इस सागर में शरीर नौ रत्नों (नवचक्र रूपी रत्न) में स्थित द्वीप के समान है । मूलाधार की नौ मुद्राएँ ही शक्तियाँ हैं । त्वचा-आदि सात धातुओं से युक्त अनेक सङ्कल्प ही कल्पवृक्ष हैं । ``तेज'' सुन्दर उपवन है ।

जिह्वा के द्वारा अनुभूत होनेवाले मधुर, अम्ल, तिक्त, कटु, कषाय और लवणात्मक स्वाद ही छह रस हैं । क्रियाशक्ति पीठ है, ज्ञानशक्ति कुण्डलिनी है और इच्छाशक्ति अहङ्कार है । महात्रिपुरसुन्दरी ज्ञाता और होता हैं । ज्ञान अर्घ्य है और ज्ञेय ही हवनीय प्रदार्थ है । ज्ञाता (किसी विषय या वस्तु को जो जान रहा हो), ज्ञान (किसी विषय/वस्तु का ज्ञान) और ज्ञेय (वह विषय/वस्तु जिसको जाना जा रहा है)- इनकी नमन-पूर्वक भेद-भावना ही श्रीचक्र का पूजन है ।

शृङ्गार-आदि नौ रस हैं । अणिमा-आदि, काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मात्सर्य-पुण्य और पाप तथा ब्राह्मी आदि आठ शक्तियाँ हैं । मूलाधार की नौ मुद्राएँ शक्तियाँ हैं । पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश; श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा और घ्राण; वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ; और मन के विकार- यह सोलह शक्तियाँ हैं । वचन, आदान, गमन, विसर्ग, आनन्द, आदान-उपादान, उपेक्षा और बुद्धि ही अनङ्ग-कुसुमादि आठ शक्तियाँ हैं । अलम्बुषा, कुहू, विश्वोदरी, वरुणा, हस्ति-जिह्वा, यशस्विनी, गान्धारी, पूषा, सरस्वती, इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना- ये नाडियाँ सर्व-संक्षोभिणी आदि चतुर्दशार की देवता हैं ।

प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय- ये १० वायु सर्व-सिद्धि-प्रदा आदि बहिर्दशार के देवता हैं । इन्हीं १० वायुओं के सम्पर्क से उपाधि-भेद द्वारा रेचक, पूरक, पोषक, दाहक और अल्पावकामृत नाम से प्राण पाँच प्रकार का होता है । भक्ष्य, भोज्य, लेह्य और चोष्य- इन चार प्रकार के अन्नों का पाचन मनुष्यों का जठराग्नि करता है । तभी सर्वज्ञत्व-आदि अन्तर्दशार के सभी देवता प्रकाशमान् होते हैं ।

शीत, ऊष्ण, सुख, दु:ख, इच्छा, सत्व-गुण, रज-गुण, तम-गुण- ये आठ ही वशिनी आदि ८ शक्तियाँ हैं l शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध- ये पाँच तन्मात्राएँ ५ पुष्प-बाण हैं; मन- ईख का धनुष है; वृत्तियाँ- बाण हैं; राग (आसक्ति)- पाश है; और द्वेष- अङ्कुश है l अव्यक्त, महत्-तत्त्व और अहङ्कार मध्यस्थ त्रिकोण की कामेश्वरी, वजेश्वरी और भग-मालिनी देवता हैं l

१५ तिथियों के रूप से काल के परिणाम को देखनेवाली १५ नित्याएँ हैं- ये नित्याएँ शुद्ध-स्वरूपा अधि-देवता हैं l उपाधि-रहिता सर्व-देव-मयी कामेश्वरी सदा आनन्द-पूर्णा हैं l साधक की अपनी आत्मा में मिली हुई स्थितिवाली, परिपूर्ण आनन्द-स्वरूप वाली ललिता कामेश्वरी इष्ट-देवता हैं l

सहित करना अर्थात् सामञ्जस्य करना ही सत्व है l कर्तव्य या अकर्तव्य- इस भावना से मुक्त होना ही उपचार है l ``मैं'- ``तुम' है l कर्तव्य या अकर्तव्य नहीं हैं l उपासित और अनुपासित- यह विकल्पना है l मन को विलय करना ही होम है l

बाहरी और भीतरी इन्द्रियों की रूप-ग्रहण करने की योग्यता है- यह ``आवाहन" है l साधक की बाहरी और भीतरी इन्द्रियों द्वारा एक रूप-एक विषय का ग्रहण करना ही ``आसन" है l रक्त और शुक्ल- इन दोनों पदों को एक करना ``पाद्य" है l उज्ज्वल आनन्द से आनन्दित करना ``अर्घ्य" है l शक्ति की स्वच्छता- यही ``आचमन" है l चिच्चन्द्र-मयी का स्मरण करना ``स्नान" है l चिदग्नि-स्वरूपा परमानन्द-शक्ति का स्मरण करना ``वस्त्र" है l इच्छा-क्रियात्मक ब्रह्मग्रन्थि-मयी ब्रह्म-नाडी ही ``ब्रह्म-सूत्र" है, और यही ब्रह्मनाडी २७ प्रकार से भिन्न होकर अतिरिक्त वस्त्र भी है l सङ्ग-रहित स्मरण ही ``आभूषण" है l स्वच्छन्द परिपूर्ण स्मरण ही ``गन्ध" है l मन की स्थिरता द्वारा सभी विषयों का अनुसन्धान करना- यह ``पुष्प" है l उन विषयों को सदा स्वीकार करना- यह 'धूप" है l पवन द्वारा उठी हुई सच्चिदानन्द की ज्योति ही ``दीपक' है l सारे आवागमन का त्याग- यही ``नैवेद्य" है l तीनों अवस्थाओं को एक करना- ``ताम्बूल" है l मूलाधार से ब्रह्म-रन्ध्र तक और ब्रह्म-रन्ध्र से मूलाधार तक आना-जाना ही ``प्रदक्षिणा" है l

तुरीय स्थिति को प्राप्त कर के संस्कार-देह से रहित होकर, परमानन्द में डूबना- यह बलि देना है l कर्तव्य-अकर्तव्य की उदासीनता से आत्म-लय कर मात्र सत्व ही है- यह भावना करना

होम है। भावना के विषयों में अभेद का विचार रखना ही तर्पण है। अपने को श्रीपादुका में मग्न करना ही पूर्ण ध्यान है।

इस प्रकार तीनों स्वरूपों की भावना से युक्त होनेवाला मुक्त हो जाता है। उसे देवता और आत्मा के ऐक्य की सिद्धि बिना प्रयास के ही प्राप्त हो जाती है और वह शिव-योगी कहलाता है।

॥ श्रीललितोपनिषत् सम्पूर्ण होती है ॥